कुंभ पर्व : इतिहास के आइने में

*डॉ. अशोक त्रिपाठी

कुंभ की परंपरा अत्यंत प्राचीन है । इसके उद्‌भव के विषय में अनेक कथाएँ प्रचलित हैं तथा विद्वानों में किसी निश्चित तिथि के प्रति आम राय नहीं बन पाई है । अमृत कुंभ का उल्लेख ऋग्वेद (10.89. 7; 1,2.3.23), शुक्ल यजुर्वेद (19.89), सामवेद (6.3) अथर्ववेद (19. 53.3, 4.34.7, 16.6.8), महाभारत (1,25), रामायण (3,35.27–34), गरुण पुराण (1,240.26–28), स्कंद पुराण (4(1)50–55–125) आदि में मिलता है ।[1]

यह एक रोचक तथ्य है कि समुद्र मंथन का उल्लेख उपरोक्त वर्णित ग्रंथों में मिलता है किन्तु किसी भी ग्रंथ में हरद्वार, प्रयाग, उज्जैन व नासिक में अमृत छलकने का उल्लेख नहीं मिलता । केवल स्कंदपुराण की कुछ अप्रकाशित पांडुलिपियों में ही इसका उल्लेख है ।[2] चूँकि स्कंदपुराण अपेक्षाकृत बाद की रचना है, अतएव ऐसा प्रतीत होता है कि जयन्त की कथा इसमें बाद में जोड़ दी गयी है जो कि काल्पनिक तथा मनगढ़न्त प्रतीत होती है ।[3]

ऐसी मान्यता है कि देश भर के मूर्धन्य विद्वान संत व मनीषी इन चारों स्थानों में नियमित अंतराल पर एकत्र होकर धार्मिक विषयों पर वाद–विवाद किया करते थे व एक दूसरे के अनुभवों का आदान–प्रदान करते थे । ऐसा विश्वास किया जाता है कि सामान्य गृहस्थ इस अवसर का लाभ उठाते हुए इन विद्वानों के वाद–विवाद का श्रवण कर पुण्य लाभ करते थे । कालांतर में अखिल भारतीय स्तर की ये सभाएँ शनैः शनैः कुंभ मेलों में परिवर्तित हो गईं ।[4]

कुंभ मेले की ज्योतिषशास्त्रीय व्याख्या भी की गई है जिसके अनुसार यह कहा जाता है कि कुंभ मेला कुंभ योग के समय धार्मिक स्नान से संबंधित है । कुंभ योग की सही तिथि एवं समय को निश्चित करने के लिये सूर्य, चंद्रमा, बृहस्पति तथा शनि आदि ग्रहों की स्थिति एवं उनके मेल को ध्यान में रखा जाता है ।[5]

संभवतः कुंभ मेला सर्वप्रथम हरद्वार में प्रारम्भ हुआ होगा । जब बारह वर्ष में बृहस्पति कुंभ राशि में तथा सूर्य मेष राशि में स्थित होता है तो हरद्वार में कुंभ पर्व मनाया जाता है । इसी प्रकार जब बृहस्पति मेष राशि में तथा सूर्य व चंद्रमा माघ मास में मकर राशि में अमावस्या के दिन प्रवेश करते हैं तो प्रयाग में कुंभ–पर्व मनाया जाता है । जब सूर्य एवं बृहस्पति सिंह राशि में स्थित होते हैं तो नासिक में कुंभ–पर्व (सिंहस्थ) मनाया जाता है ।

जब बृहस्पति सिंह राशि में तथा सूर्य मेष राशि में प्रवेश करता है तो उज्जैन में कुंभ–पर्व मनाया जाता है । इस तरह के खगोलीय संयोग की बात नारदीय पुराण (2,66.44) में कही गई है जो कि गंगा स्नान के लिए एक शुभ अवसर होता है । हरद्वार से प्रारम्भ होकर कुंभ की परपंरा प्रयाग, उज्जैन व नासिक में भी प्रचलित हो गई ।[6]

प्रयाग में माघ महीने में गंगा, यमुना एवं सरस्वती के पावन संगम पर स्नान करने की परंपरा अत्यंत प्राचीन है जिसका प्रमाण ऋग्वेद में मिलता है । ऋग्वेद में कहा गया है कि –

सितासिते सरिते यत्र संगते तत्राप्लुतासो दिवमुत्पतन्ति ।
ये वै तन्वं विसृजन्ति धीरास्ते जनासो अमृतत्वं भजन्ते।।[7]

अर्थात् जो श्वेत एवं श्याम नदियों के संगम में स्नान करते हैं वे स्वर्ग को प्राप्त करते हैं तथा जो दृढ़–प्रतिज्ञ व्यक्ति यहाँ देह त्याग करते हैं वे अमर हो जाते हैं । पुराणों में माघ महीने में, जब सूर्य मकर राशि में होता है, गंगा–यमुना के संगम पर स्नान की सलाह दी गयी है । गंगा के लिये कहा गया है कि ''गंगे तव दर्शनात मुक्तिः'' । स्कंदपुराण के अनुसार तीर्थराज के स्मरण मात्र से मुक्ति मिल जाती है –

''प्रयागं स्मरणश्च यस्तु प्राणान्परित्यजेत ब्रह्मलोकमवाप्नोति वदन्ति मुनि पुंगवाः'' ।[8]

कुंभ पर्व के उद्‌भव के विषय में निश्चयपूर्वक कुछ कहना संभव नहीं है । 'कुंभ' का उल्लेख वेदों, पुराणों व महाकाव्यों में हुआ है किन्तु 'कुंभ मेला' का उल्लेख कहीं नहीं हुआ है, इस विषय में सभी धर्म–ग्रंथ मौन हैं । विद्वानों ने इसे युग–युगान्तर से चलने वाला पर्व बताया है । सातवीं शताब्दी में भारत आए चीनी यात्री व्हेन सांग, जो भारत में 629 ई0 से 645 ई0 तक रहा, ने प्रयाग में गंगा के किनारे हर्ष के द्वारा आयोजित पंचवर्षीय सभा की बात की है जहाँ हर्ष प्रत्येक पाँच वर्ष बाद एक सभा कर अपना सर्वस्व दान कर देता था ।

उसके अनुसार त्रिवेणी संगम में करीब पाँच लाख लोग एकत्र होते थे एवं यह समारोह महीने भर चलता था । इस मेले में सम्राट हर्षवर्द्धन व उसके सामंतो के अलावा विभिन्न संप्रदायों के साधु–संत , धार्मिक व्यक्ति, दार्शनिक, विद्वान, आम जनता तथा भिखारी आदि सम्मिलित होते थे । व्हेन सांग ने इसे अनंतकाल से चला आ रहा उत्सव बताया है । किन्तु उसने कुंभ मेले के रूप में इसकी चर्चा नहीं की है ।[9]

कुछ विद्वानों ने व्हेन सांग के विवरण को आधार बनाकर इसे अर्द्धकुंभ की संज्ञा देने का प्रयास किया है ।[10]

कुंभ मेले का ऐतिहासिक संबंध भगवत्पाद्य आदि शंकराचार्य के

* वरिष्ठ प्रवक्ता, इतिहास विभाग, एस.डी. कॉलेज, मुजफ्फरनगर

साथ भी जोड़ा जाता है,[11] किंतु शंकराचार्य व उनके किसी शिष्य ने इसका उल्लेख अपनी किसी कृति में नहीं किया है । अतः यह कहना अत्यंत कठिन है कि कुंभ मेला अपने वर्तमान रूप में कब प्रारम्भ हुआ तथा इसे किसने प्रारम्भ किया । सुबास राय का मत है कि, ''केवल खगोलीय परीक्षण ही इस मेले की प्राचीनता के संबंध में विश्वसनीय सूचना दे सकते हैं। '' खगोलीय गणनाओं को आधार बनाकर वे कहते हैं कि, ''कुंभ मेला कुंभ राशि की संकल्पना पर आधारित है इसलिये पूरी संभावना है कि यह 283 ई0 के लगभग प्रारम्भ हुआ होगा जब भारतीय खगोलशास्त्र की शुरुआत सौर–पंचांग पर आधारित हो गयी। मेले का प्रारम्भ हर्ष के समय में हुआ होगा तथा शंकराचार्य ने इस स्थानीय मेले को साधु संतों की अखिल भारतीय सभा में परिवर्तित कर दिया ।''[12]

शंकराचार्य के समय से कुंभ मेलों का महत्व बहुत बढ़ गया । देश भर से साधु–संत एकत्र होकर धर्म एवं समाज की उन्नति हेतु चर्चा करते थे । शंकराचार्य द्वारा स्थापित दशनामी संप्रदाय के संन्यासी इस मेले में आकर्षण का सबसे बड़ा केन्द्र बन गए । शंकराचार्य द्वारा स्थापित चार मठों गोवर्द्धनपीठ (पुरी), शारदापीठ (द्वारका), श्रृंगेरीपीठ (श्रृंगेरी) तथा ज्योतिष्पीठ (जोशी, उत्तराखंड) – के संन्यासियों ने भारत के धार्मिक जीवन की दशा एवं दिशा के निर्धारण में पिछले बारह सौ वर्षो में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है ।[13]

1266 ई0 में हरद्वार में कुंभ के अवसर पर दशनामी संप्रदाय के महानिर्वाणी अखाड़ा के नागा सन्यासियों तथा वैरागियों के बीच हुए एक खूनी संघर्ष का विवरण हमें प्राप्त होता है जिसमें वैरागियों की पराजय हो गयी थी ।[14] 1398 ई0 में तैमूर ने हरद्वार कुंभ के अवसर पर बड़ी संख्या में श्रद्धालुओं का नरसंहार कराया था ।[15]

पारंपरिक इतिहास से पता चलता है कि भक्ति आंदोलन के संत बंगाल के चैतन्य महाप्रभु ने 1514 ई0 में प्रयाग में संपन्न हुए कुंभ मेले में भाग लिया था ।[16]

कबीरदास ने भी संभवतः दशनामी नागा सन्यासियों का दिग्दर्शन किसी कुंभ पर्व के अवसर पर किया था ।[17]

दबिस्तान–ए–मजाहिब के लेखक फानी ने हरद्वार कुंभ के अवसर पर 1640 ई0 में मुंडी एवं सन्यासियों के युद्ध का वर्णन किया है जिसमें बड़ी संख्या में मुंडी साधु हताहत हुए थे ।[18]

1760 ई0 में हरद्वार कुंभ के अवसर पर ढोकल गिरी के नेतृत्व में दशनामी नागाओं ने 18000 वैरागियों को हताहत कर दिया था।[19]

इसी प्रकार 1789 ई0 में नासिक कुंभ के अवसर पर सन्यासियों एंव वैरागियों के संघर्ष में 12000 साधु हताहत हुए थे जिसमें वैरागियों की संख्या अधिक थी ।[20]

उपरोक्त विवरण से पता चलता है कि शैव तथा वैष्णव साधुओं में मतभेद कितने तीव्र थे । वे स्वयं को दूसरे से श्रेष्ठ समझते थे तथा पहले स्नान कर पुण्यलाभ कमाना चाहते थे । इन्होंने कुंभ मेले के पवित्र स्थल को समरांगण में परिवर्तित कर दिया था । वे इसे 'खूँटे की लड़ाई' कहते थे ।[21]

भारत में ब्रिटिश शासन के दौरान प्रथम बार कुंभ मेलों तथा प्रतिवर्ष प्रयाग में लगने वाले माघ मेलों को सुचारु रूप से संपन्न करने में प्रशासन ने रुचि दिखाई । अंग्रेज सरकार मेले के अवसर पर व्यापक प्रबंध करती थी तथा मेले की विधिवत् रिपोर्ट भी तैयार करती थी।[22]

इन रिपोर्टों का अध्ययन करने से पता चलता है कि कुंभ मेले के अवसर पर ईस्ट इंडिया कंपनी यात्रियों को सुरक्षित रूप से मेला क्षेत्र में पहुँचने हेतु पुलिस सुरक्षा प्रदान करती थी तथा तीर्थयात्रियों को लाइसेंस प्रदान कर उनसे कर भी वसूलती थी । लंदन मिशनरी सोसाइटी के एक सदस्य ने ईस्ट इंडिया कंपनी को 'मूर्तिपूजा का मूल्य' वसूलने के लिए फटकार लगाई थी ।[23]

हरद्वार कुंभ मेले का प्रथम अंग्रेजी विवरण 1796 ई0 में तैयार किया गया जब हरद्वार मराठों के अधीन था । अंग्रेजी विवरणों में कुंभ मेलों के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है । कुछ अंग्रेज विद्वानों ने अपने संस्मरणों में कुंभ मेलो का जिक्र किया है । हेनरी पार्कस् ने अपने यात्रा विवरण 'वांडरिंग्स आफ ए पिलग्रिम' में 1850 ई0 के इलाहाबाद के 'बड़े मेले' का सजीव वर्णन किया है । इस विवरण में कहा गया है कि मेले में सर्वाधिक स्मरणीय लोग मेले में इकट्ठे होने वाले साधु –संत है ।[24]

कुछ ईसाई मिशनरियों ने कुंभ मेले में नागा सन्यासियों की शोभा यात्रा का विरोध करते हुए नैतिकता के नाम पर ब्रिटिश सरकार से उसे बंद कराने का आग्रह किया था किन्तु ब्रिटिश सरकार ने हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं से छेड़छाड़ को उचित न मानते हुए इस आग्रह को ठुकरा दिया ।[25]

अनेक अंग्रेज विद्वानों के लिए कुंभ मेले की तड़क–भड़क तथा श्रद्धालुओं की आस्था कौतूहल की वस्तु थी। कुंभ मेलों के अवसर पर साधु–संतो व गृहस्थों के बीच घनिष्ठ स्तर की सामाजिक– धार्मिक अन्तर्क्रिया होती है । कुंभ मेला भारतीय संस्कृति में जाति आधारित समाज तथा धार्मिक संस्थानों के मध्य स्थित मूलभूत अनुबंध की सांकेतिक अभिव्यक्ति है।[26]

कुंभ पर्व भारतीय संस्कृति में निहित विराट ऐक्य भावना का प्रतीक रही है । यहाँ समस्त संप्रदायों के संत–महंतों के अलावा जनता के सभी वर्ग व जाति के लोग चारों दिशाओं से एकत्र होते हैं। कुंभ मेले में भाषागत भिन्नता, प्रादेशिकता, सांप्रदाइकता, छोटे–बड़े व ऊँच–नीच की भावना जैसी संकीर्णता के लिए कोई स्थान नहीं होता । यह एक चलता फिरता विश्वविद्यालय है जहाँ सीखने के लिए बहुत कुछ मिलता है।[27]

धर्म एवं आध्यात्म की भूख को शान्त करने के लिए कुंभ मेले से उत्तम स्थान दूसरी जगह नहीं प्राप्त हो सकता । भारत में धार्मिक मेलों की एक लंबी श्रृंखला है । कुंभ मेले की प्रकृति मूलतः दूसरे मेलों से भिन्न है । आज की व्यापारिक मानसिकता ने उसे प्रभावित अवश्य किया है तथापि उसकी मूल भावना अभी तक जागृत व जीवंत है । कुस–कौस, कनात–नौका, जहाज–गंगा, जली–जनेऊ, मुंडन, तर्पण हाँडी, पिंडदान,

स्नान–गोदान सब गंगा मैया के भरोसे होता रहा है ।[28]

कुंभ मेले का अनूठापन इस बात में है कि यह किसी जाति विशेष अथवा साधु संप्रदाय से संबंधित नहीं है । संपूर्ण भारत की आत्मा इस मेले में बसती है । साधु एवं गृहस्थ को समान रूप से मुक्ति का आकर्षण कुंभ स्थल पर खींच लाता है । महाकुंभ भारत की भावनात्मक एकता का प्रतीक है तथा देश का सबसे बड़ा गौरवपूर्ण सांस्कृतिक महोत्सव है व देश की स्थिरता की पहचान है ।[29]

जवाहरलाल नेहरु इलाहाबाद व हरद्वार कुंभ मेलों में अपार जनसमूह को स्नान करते देख भाव विभार हो उठते थे तथा इसका वर्णन उन्होंने अपने लेखन में किया है । उनके अनुसार, ''यह कैसा विस्मयकारी विश्वास है जो पीढ़ियों से अपार जनसमूह को इस नदी (गंगा) तक खींच लाता है ।[30]

महात्मा गांधी ने भी अपने अनुभवों में कहा है कि अपार जनसमूह का एक साथ इस अज्ञात आकर्षण में बँध कर चले आना मात्र पाखण्ड नहीं हो सकता। आधुनिक युग में विभिन्न संप्रदाय के साधु–संत कुंभ के अवसर पर धर्म महासभाओं का आयोजन कर धार्मिक विवादों को हल करने का प्रयास करते हैं । 1956 ई0 में गठित भारत साधु समाज एक प्रभावशाली धार्मिक संगठन है जिसका अधिवेशन कुंभ के अवसरों पर होता है । इन अधिवेशनों में धर्म व धर्मस्थलों के संरक्षण, साधु–मर्यादा का संरक्षण, आध्यात्मिक विकास, नैतिक शिक्षा, राष्ट्रीय एकता, आर्थिक विकास, समाज सुधार व सदाचार, गोरक्षा, आंतकवाद पर नियंत्रण, अश्लील प्रकाशनों पर प्रतिबंध, उत्पादित वस्तुओं पर देवी–देवताओं के प्रदर्शन पर रोक, आणविक आयुधों पर प्रतिबंध, अश्लील फिल्मों पर प्रतिबंध, मद्य–मांसाहार– धूम्रपान पर रोक, धार्मिक ट्रस्ट कानून में संशोधन जैसे विषयों पर चर्चा कर प्रस्ताव पारित किए जाते है । इस प्रकार साधु समाज केवल धार्मिक प्रवचन ही नहीं करते हैं अपितु इस अवसर का लाभ उठाते हुए आपसी सत्संग व विचार–विमर्श द्वारा अपने ज्ञान की वृद्धि के साथ–साथ देश एवं विश्व को कल्याणकारी सामाजिक चेतना का संदेश देते हैं ।

संदर्भ ग्रंथ

1. सिन्हा, सुरजीत ऐंड सरस्वती, बी0एन0– 'एसेटिक्स आफ काशीः ऐन एंथ्रोपोलॉजिकल एक्सप्लोरेशन' (वाराणसीः एन0के0बोस मेमोरियल फाउंडेशन, 1978), पृष्ठ 148–149;राय, सुबास– 'कुंभ मेलाः हिस्ट्री ऐंड रिलीजन, एस्ट्रोनामी ऐंड कास्मोबायलाजी' (वाराणसी, गंगाकावेरी पब्लिशिंग हाउस, 1993), पृष्ठ 38–43; झा, माखन (संपा0)– 'सोशल एंथ्रोपोलॉजी आफ पिलग्रिमेज' में जगदीश चन्द्र दास एवं जितेन्द्र सिंह का लेख 'द ट्रेडीशन आफ कुंभ' (दिल्ली, 1986), पृष्ठ 238–239 । 2. दास, जगदीश चंद्र एवं सिंह, जितेन्द्र – पूर्वोक्त, पृष्ठ 238–239 । 3. राय सुबास – पूर्वोक्त, पृष्ठ – 44 । 4. दास, जगदीश चंद्र एवं सिंह जितेन्द्र – पूर्वोक्त, पृष्ठ 239 । 5. कुंभ मेला प्रयाग – 1989 की प्रशासनिक रिपोर्ट (गवर्नमेंट प्रेस, इलाहाबाद, 1994) । 6. राय सुबास – पूर्वोक्त, पृष्ठ 48–49 । 7. दुबे, डी0पी0 – 'प्रयाग : ए नेम स्टडी' इतिहास, भाग 9, 1982, पृष्ठ 91 । 8. गंगा यमुना (साप्ताहिक पत्र) माया प्रेस, इलाहाबाद, 15–21 जनवरी 1995 में डा0 सुरेशव्रत राय का लेख – 'अर्द्धकुंभ अनुष्ठान महापर्व', पृष्ठ–10 । 9. बील, सैमुएल – 'सी–यू–की : बुद्धिस्ट रेकर्ड्स आफ वेस्टर्न वर्ल्ड' भाग–1 (लंदन, 1884), पृष्ठ 231 । 10. राय, दिलीप कुमार ऐंड इंदिरा देवी – 'कुंभ : इडियाज एजलेस फेस्टिवल' (भारतीय विद्या भवन, बाम्बे, 1955) की भूमिका । 11. गौड़, आचार्य शिवदयाल – 'महाकुंभ पर्व', पंचवटी संदेश, अप्रैल, 1986, पृष्ठ 6–7;भट्ट, बी0एल0 – 'कुंभ पर्वो में शंकराचार्य जी का योगदान', भारत संत संदेश, (इलाहबाद, जनवरी 1995) पृष्ठ 52–53 । 12. कुंभ मेला (पूर्वोक्त), पृष्ठ 62–63 । 13. वेंकटरमण, आर0 – 'आदि शंकर : द अर्किटेक्ट आफ यूनीफाइड इंडिया', धर्म मार्ग, जुलाई–सितम्बर 1988, पृष्ठ–4; राव, नागराजा पी0 – 'शंकर द ग्रेट इंडियन फिलासफर' इंडो एशियन कल्चर, भाग–16, न01, जनवरी, 1967, पृष्ठ 5–16 । 14. सरकार, जदुनाथ – 'ए हिस्ट्री आफ दशनामी नागा सन्यासीज' (इलाहाबाद, 1950), पृष्ठ 86 । 15. नेविल, एच0आर0 –'डिस्ट्रिक्ट गजेटियर आफ यूनाइटेड प्राविंसेज आफ आगरा ऐंड अवध' भाग–2, सहारनपुर (इलाहाबाद, गवर्नमेंट प्रेस, 1909), पृष्ठ 254–255 । 16. घुरिए, जी0एस0 –'इंडियन साधुज' (बाम्बे, पापुलर प्रकाशन, 1953), पृष्ठ 182 । 17. द्विवेदी, हजारी प्रसाद – 'कबीर' (नई दिल्ली, 1980) पृष्ठ 139 । 18. शीआ, डेविड ऐंड ट्रायर, ऐथंनी – 'द दबिस्तान' (लाहौर, 1973), पृष्ठ–267 । 19. एशियाटिक रिसर्चेज, भाग–17 (दिल्ली, कास्मों, 1979), पृष्ठ 209 । 20. बुरघार्ट, रिचर्ड – 'वांडरिंग एसेटिक्स आफ रामानंदी सेक्ट' हिस्ट्री आफ रिलीजंस, भाग–22 (4) मई 1983, पृष्ठ 374 । 21. एसेटिक्स आफ काशी (पूर्वोक्त), पृष्ठ 153 । 22. सरकार, जदुनाथ – 'नागा सन्यासीज .. ...' पृष्ठ 98–99 । 23. कैसेल्स, नैंसी गार्डनर – 'रिलीजन ऐंड पिलग्रिम टैक्स अंडर द कंपनी राज' (दिल्ली,1988), पृष्ठ 26 । 24. पार्क्स हेनरी – 'वांडरिंग्स आफ ए पिलग्रिम' (लंदन, 1850), पृष्ठ 256 । 25. प्रोसीडिंग्स आफ होम (पब्लिक) डिपार्टमेंट, अगस्त 1888, न0 165–168 ए । 26. ग्रास, राबर्ट लेविस – 'साधुज आफ इंडिया' (दिल्ली, 1992), पृष्ठ 165–166 । 27. चलपतिराव, आइ0वी0 – 'शंकर : ह्यूमनिस्ट, इंटीग्रेटर, पोयट एंड फिलासफर' (हैदराबाद, 1990), पृष्ठ 71 । 28. प्रशासनिक रिपार्ट, इलाहाबाद कुंभ–1989, पृष्ठ–10 । 29. वही पृष्ठ – 10 । 30. नेहरु, जे0एल0 – 'डिस्कवरी आफ इंडिया' (दिल्ली, 1969), पृष्ठ 51 ।